International Journal of Applied Research 2016; 2(2): 444-446

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(4): 444-446
www.allresearchjournal.com
Received: 19-12-2015
Accepted: 21-01-2016

नरेश कुमार
गांव अरनियां वाली, जिला –सिरसा हरियाणा।

Correspondence
नरेश कुमार
गांव अरनियां वाली, जिला –सिरसा हरियाणा।

नई कहानी में सांस्कृतिक यथार्थ का चित्रण

नरेश कुमार

प्रस्तावना

नई कहानी में राजनैतिक और सांस्कृतिक आंदोलन से होकर रल-मिल गये। परिणामतः सांस्कृतिक क्षोभ राजनैतिक मंच से प्रसारित और राजनैतिक असंतोश सांस्कृतिक क्षेत्र से प्रचारित होने लगा क्योंकि पराधीन देश की संस्कृति राजनीति से स्वतंत्र हो ही नहीं सकती।[१] इसलिए हमारी सामाजिकता से नव्यमूल्यों के सृजन काल में ही अप्रत्याशित बदलाव आ गया। इसका परिणाम यह हुआ कि नए सामाजिक मानदंडों, लोकाचारों, मान्यताओं और मूल्यों के निर्माण में गत्याविरोध पैदा हो गया। इस स्थिति के लिए कई कारण उत्तरदायी है जिनमें सबसे पहली और महत्त्वपूर्ण बात यह है कि -- सांस्कृतिक विकास-प्रक्रिया का आरंभ शांति, सुख समृद्धि और काल-जन्य सामंजस्य की स्थिति में न होकर संघर्ष की स्थिति में हुआ और संघर्ष भी वह जो राजनीतिक सीमाओं पर ही नहीं बल्कि धार्मिक, सामाजिक अर्थात् पूरे सांस्कृतिक 'फ्रन्ट' पर हो रहा था।

हम भारत के पश्चिमीकरण के हिमायती और अनुयायी तो हो गए परंतु अपने-अपने घरों, मनों में और सोचने-समझने व निर्णय लेने के तौर तरीकों में हम पूरे पुराणपंथी ही बने रहे। ''बौद्धिक दृष्टि से हिंदु धर्म के प्रचलित रूप में विश्वास न रह जाने पर भी सामाजिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक जीवन उसी से संचालित होता रहा।''[२] और सांस्कृतिक तन्द्रा की यह दशा अभी तक नहीं टूटी। हम बहुत अर्थों में अब भी स्वतंत्र अर्थ न ले पाने की दुविधा के शाप से ग्रस्त होने के कारण जड़ बन बैठे हैं। नई कहानी में जितने भी तथाकथित सुधारवादी आंदोलन हुए, वे प्रायः सभी एकांगी थे। उदाहरण के लिए, हम नये धार्मिक-सांस्कृतिक सुधारवादी मंच से समाजवाद, मानवतावाद, विश्वबंधुत्व, आध्यात्मवाद आदि के नारों द्वारा जाति-पाति, छुआछुत, धर्म-कर्म, वर्ग भेदों को मिटाकर समानाधिकार देने-दिलाने की बात तो कहते रहे लेकिन इसके व्यावहारिक पक्ष पर किसी ने कोई ध्यान नहीं दिया। फलस्वरूप एक भी शुद्र को अपना रसोईया रख लेने या घर में आने वाली मेहतारानी से रसोई अथवा बर्तन-सफाई का काम करवाने वाले व्यक्ति एक-प्रतिशत भी शायद ही मिलें। हम घर से बाहर दफ्तरों, स्कूलों, कॉलेजों, सभा-सोसायटियों में सब भेदभाव भुलाकर तो एकमेक हो जाते हैं, लेकिन अपने अपने घरों में आकर उदारता और आधुनिकता का वह लबादा पहनकर भी पुराण पंथी ही बने रहते हैं। ''घर'' और ''बाहर'' अर्थात् 'कर्म' और 'चिंतन' का यह अंतर्विरोध इसलिए बना कि बाह्य जीवन जिस शिष्टाचार की मांग करने लगा, वह घर के वातावरण से मेल नहीं खाता था और बाह्य जीवनगत स्वच्छन्दता घर की चारदीवारी में इसलिए न घुस पाई कि वहां अभी भी मध्ययुगीन संस्कारों का दबदबा है। इस प्रकार घर और बाहर के वातावरण में व्यक्ति के अंतर्मन और बाह्य जगत में इस विरोधाभास ने सामाजिक चिंतन का संतुलन बिगाड़ दिया।

दूसरी तरफ पश्चिमी दर्शन के जो चिंतन-सूत्र हम तक पहुंचे वह नितांत भिन्न देशकाल और परिस्थितियों में निकाले गये निर्णय होने के कारण हमारी समस्याओं और चिंताओं का हल नहीं बन सके। नई कहानी में चितंन के स्तर पर जो अंतर्विरोध उभरे हैं, वे पश्चिमी अंर्तद्वन्द्व और निर्वेयक्तिकता जन्य शून्य से भिन्न अपने चरित्र-निर्माण में मौलिक है।

इस दृष्टि से यह कथन सत्य है कि-

''हमारा परायापन दूसरे ढंग का है। यूरोप में संपन्नता वाले अर्थतंत्र में पूरे रोजगार, पूरी तुष्टि तथा अधिक अवकाश के बीच आत्म-निर्वासन विकसित हैं और हमारी परिस्थितियां ठीक उल्टी हैं। अतः हमारे यहां एक विवश और अपंग किंतु ऊर्जस्वी मनुष्य का परायापन है जो कर्म का अवसर ही नहीं पा सका है। अतः यहां आक्रोश और क्षोभ की प्रधानता है न कि दर्शन की विरचित या मृत्यु की साधना।

अतः यहां सामाजिक प्रयोजनों के व्यावहारिक झूठ के उद्घाटन से उत्पन्न विभ्रान्तिकरण अधिक है।[३] इस प्रकार नई कहानी में परम्परागत भारतीय सामाजिकता के संदर्भ में पाश्चात्य संस्कृति की विसंगति और नवीन परिस्थितियों अनुरूप सांस्कृतिक परंपरा की सारहीनता के कारणों ने हमें सांस्कृतिक-शून्यता की स्थिति में ला खड़ा किया और हम एकाएक क्रिमकर्त्तव्यविमूढ़ से हो गये। इस सांस्कृतिक शून्यता को हम अक्सर पाश्चात्य सांस्कृतिक विभ्रान्तिकरण के साथ रखकर देखते हैं जो समाजशास्त्र की दृष्टि से अत्यंत गलत है। हर देश की सामाजिकता अपने ही ढंग से मोड़ लेती है। इसलिए हमारी कुण्ठा, अकेलापन और अस्तित्त्व का संकट उससे नितांत भिन्न है-वह टूटते परिवार से उद्भूत है। वह आर्थिक संबंधों के दबाव से अनुस्यूत है- हमारी स्थिति दूसरों द्वारा गाड़े गये सलीबों पर जबरदस्ती लटका दिये गये लोगों की है।[४]

नई कहानीकारों की मान्यता है कि सांस्कृति दृष्टि से एशियाई और यूरोपीय चिंतन धाराओं में ''आध्यात्मिक-निष्ठा'' और ''बौद्धिक-निष्पक्षता'' का मूल भेद है क्योंकि किसी सभ्यता के वास्तविक स्वरूप का पता अब उसकी रूढ़ियाँ और संस्थाओं से उतना नहीं चलता जितना कि उसके आत्मिक मूल्यों और मन की सज्जा से चलता है।[५]

आधुनिक युग में हमें जिस सांस्कृतिमक-संकट से गुजरना पड़ रहा है, उसका कारण उसी आत्मिक ऊर्जा में अभूतपूर्व संकट है। हमारे यहां सदा ही धर्म का सारी सामाजिक व्यवस्था पर प्रभाव रहा। पहले किसी भी प्रकार के आत्मिक या सांस्थानिक परिवर्तन के लिए धर्म परिवर्तन की प्रक्रिया से गुजरना पड़ता था अर्थात् धर्म परिवर्तन पहले और अन्य परिवर्तन बाद में होते थे। परंतु नई कहानी में जो क्रान्तिकारी दबाव पड़े, उनके परिणामस्वरूप सामाजिकता पर धर्म का एकाधिकार समाप्त हो गया। नई परिस्थितियों में धर्म के प्रति आस्था समाप्तप्राय हो गई और धर्म परिवर्तन की आवश्यकता के बिना ही, सांस्कृतिक-परिवर्तन की प्रक्रिया यथावत चलती रही।[६] ''धर्म अब गति देने वाली शक्ति नहीं रह गया। इसलिए अब एक अजीब तरह की निर्धनता पैदा हुई है। जीवन पद्धति के मूल्यों को तय करने का काम भी धर्म अब नहीं करता और हमारे सवालों के जवाब देता है।''[७] फलतः धर्म के शिकंजे से निकल कर सांस्कृतिक-धारा बिना लक्ष्य और ध्यातव्य के जिस तीव्रता से अग्रसर हुई, उसने हमारी सारी सामाजिक व्यवस्था के वैधानिक पक्ष पर दबाव डाला।

नई कहानी में यह भी स्पष्ट किया गया है कि धर्म के प्रति हमारी सदियों पुरानी अंध आस्था ने उसे इतना अधिक पनपने का अवसर दिया कि आज हम अपनी धर्म व्यवस्था की सर्वांग जर्जरता, अनुपयोगिता, व्यर्थता और अनावश्यकता के बावजूद भी उसे मन से नकारने के लिए झिझकते हैं, ''पति का क्रिया-कर्म तो करना होगा किंतु मनुष्य मर कर प्रेत होता है यह भी तो नहीं जानता। पुरखे जो कुछ करते आये हैं उसे कर देना भी जरूरी है.....''।[८] हमारे मन में आत्मा-परमात्मा, पाप-पुण्य, स्वर्ग-नरक आदि का भय इतना गहरे पैठ गया है कि हम तत्संबंधी किसी भी स्तर पर कैसे ही विद्रोह के लिए स्वयं को नपुंसक पाते हैं। ईश्वर के विषय में ''भूखा ईश्वर'' का नायक कहता है ''महसूस हो रहा था कि भूल से लापरवाही से कहीं पर आदमी की पसलियों में कोई काली बूंद बहानी है जिससे आदमी की आत्मा में इतना अंधेरा छा जाए कि वह इसे चुपचाप सह भी ले।''[९]

नई कहानी में जिस भगवान के लिए, यदि वह है तो, हम पागल और जड़ हुए जा रहे हैं ''उसी भगवान के राज्य में आदमी ने आदमी को इस दशा तक ला दिया है कि धरती माँ की छाती भी दरक गई और उसके भीतर छिपा हुआ कष्ट कोहरे सा उबल-उबल कर सबको ग्रसने लगा है।[१०] फिर भी अगर कोई धर्म की मूल्यहीनता का प्रश्न उठाता हुआ समाज को कहता है कि ''तुम लोग धोखे में हो''[११] तो उसे जड़ रूढ़ियों की देहरी से धक्के देकर बाहर निकाल दिया जाता है।

नई कहानी के अनुसार दूसरी और हमारा बाह्य परिवेश-विशेषकर शहरी -कुछ इस कदर बदल गया है कि उसमें हमारी परंपरागत धर्म संबंधी विचारधारा नितांत असंगत ही नहीं अनावश्यक हो गई है। इसका परिणाम यह हुआ कि हमारे विश्वासों, आस्थाओं, अर्थात् व्यक्तिगत दृष्टिकोण और बाह्य परिवर्तन अर्थात् सामाजिक दृष्टिकोण में विरोधाभास खड़ा हो गया। हम आचरण और दिखावे में अत्याधुनिक बने रहने पर भी आस्था और विश्वास से जड़ और प्राचीन ही रह गये। ''एक कटी हुई कहानी''[१२] की नायिका कुलवंती आधुनिक युग के इस द्विविध-व्यक्तित्व का सटीक प्रमाण है। नई कहानी में बाहरी जीवन के ''इस सारे हल्केपन, बीयर-डांस, कैबरे''[१३] के साथ-साथ पाठ-पूजा एवं कट्टरपंथियों की तरह नित्य-नेम, इस पर विडम्बना यह कि हम सब जानते चाहते हुए इस द्विविध व्यवहार से स्वयं को मुक्त न कर सके। पास-पड़ौस में किसी भक्त-भक्तिनी द्वारा गाये जाने वाले भजनों पर ''आसपास के लोग बुरा मनाते'' रहे,[१४] 'ईश्वर' को महज ''आदमी की कल्पना''[१५] मानते हुए और मंदिरों और मस्जिदों के काले कारनामों से परिचित होते हुए भी हम धर्म की आड़ में चल रहे इन आडम्बरों और नैतिक व्याभिचार के विरूद्ध किसी विद्रोह का सृजन-समर्थन न कर सके।

नई कहानी में इस नपुंसक विद्रोह का कारण जनसाधारण की धर्ममीरूता को माना है। यह प्राग्-ऐतिहासिक प्रवृति सदियों से विरासत में पीढ़ी दर पीढ़ी सामाजिक आक्रोश को कुंठित करती रही और धीरे-धीरे भारतीय समाज इस आवश्यक बुराई से इतना आक्रान्त हो गया कि दैनिक जीवन संबंधी प्रत्येक कार्य का आरंभ धार्मिक-अनुष्ठानों द्वारा करना रूढ़ होता चला गया। पुरानी गली में ''प्रसाधन केश कर्तनालय'' अर्थात् नाई की दुकान का मुहुर्त है तो सत्य नारायण की कथा[१६] कराई जाने लगी। ''बिना नेमटैम के कल-कब्जे वाली चीज का पुन्याह'' करने के लिए दण्ड जुर्माने के पैसे से पूजा की सामग्री खरीदी जाती रही। ''टूरी'' को सीतला माता के प्रकोप से बचाने के लिए उधार लेकर दूध का खप्पर[१७], इकहरे रंग की घज और मुर्गे के चूजे से देवी बचाने को प्रसन्न करने का प्रयास[१८], होते रहे, बैल की टांग ठीक कर देने की प्रार्थना के लिए डीह देवता की पूजा हेतु उधार लाकर सामान पुजारी को पहुंचाया जाता रहा[१९] पिता की रोग मुक्ति की समस्या है तो सत्यनारायण की कथा कराई जाती रही[२०] गांठे अच्छे भाव बिकवानी हों तो अनुष्ठान होते रहे। लड़की की शादी हो तो कथा होगी। बेटा राधा को ८०रूपये की नौकरी मिले तो ''महीने भर का कल्पवास'' होगा[२१], बाढ़ से मुक्ति पानी है तो कथा होगी : पुलिस और सरकारी नियमों के बाहर जाकर मृत व्यक्ति की आत्मा हेतु श्राद्ध होते रहे, पति के क्रियाकर्म के लिए गहने तक बेझिझक बेचे गये[२२], वृद्ध पिता 'आयकर' की क्रियाकर्म[२३] हेतु गोपालन को कोमल से सौ रूपया लेने पड़े और पति के सकुशल घर लौट आने की प्रार्थना में कंकाली देवी की मढ़िया तक दंड भरते हुए जाने की मनोतियां मनाई जाती रही[२४] आदि आदि।

निष्कर्ष

कहा जा सकता है कि नई कहानी में लेखकों की मान्यता के अनुसार भारतीय समाज की धर्म-भीरूता की एक विशेषता

यह है कि सुख शांति से धार्मिक आस्था में जो लोच आ भी जाती है। दुःख आपत्ति आते ही वह समग्र-प्रज्ञा दुःख निदान के प्रयासों के स्थान पर ईश भक्ति में लग जाती है। यहां 'मुसीबत' के समय हमेशा भगवान का सहारा' लिया जाता रहा है।[२५] इस पर विडम्बना यह कि डूबते गांव को बचाने या स्वयं बच निकलने के प्रयास के स्थान पर देवी देवताओं को पुकारा जाने लगा। कहा जा सकता है कि मध्ययुगीन विचारों का आधार धर्म था, जो अपनी जर्जरता पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण का दबाव पाने के कारण अपने ही खोल में झनझनाने लगा। परिणामस्वरूप परंपरागत सारे नैतिकशास्त्र और आचरण झूठे असामयिक और खंडित प्रतीत होने लगे जिसने जनसाधारण को हतप्रभ कर दिया। नई कहानी में स्वतंत्रता प्राप्ति तक स्वतंत्रता के आर्दशवादी, रोमांटिक, विभ्रान्तिकृत दिवास्वप्न इस असंतोष के लिए निकास स्त्रोत का काम करते रहे, लेकिन स्वातंत्रयोत्तर आक्रोश को और तीव्रता दी।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. The politics and the culture of a subject country cannot be separated from each other.
2. Modern Indian Culture : D.P. Mukerji, p.२५१
3. आधुनिकता बोध और आधुनिकीकरण, डॉ० रमेश कुंतल मेघ, पृष्ठ २१
4. आधुनिकता बोध और आधुनिकीकरण, डॉ० रमेश कुंतल मेघ, पृष्ठ १३४
5. नई कहानी की भूमिका, कमलेश्वर, पृष्ठ सं० ८६
6. धर्म : तुलनात्मक दृष्टि में - डॉ० राधाकृष्णन, पृष्ठ ३४
7. तुलना के लिए देखिए :
8. In the past men had changed their creed without changing their ways of life. Now a process began by which men changed their ways of life without changing their creed.
9. The Indian Heritage – Humayan Kabir, page १८
10. नई कहानी की भूमिका, कमलेश्वर, पृष्ठ सं० १५६
11. प्रवासी, रांगेय राघव, (काठ का सपना), पृष्ठ ८४
12. भूखा ईश्वर, धर्मवीर भारती, पृष्ठ ४३
13. जरूरत, विष्णु प्रभाकर (मेरी प्रिय कहानियाँ) पृष्ठ ३५
14. भूखा ईश्वर, धर्मवीर भारती, पृष्ठ ४३
15. टूटना तथा अन्य कहानियां, राजेन्द्र यादव
16. वही
17. गीता सहस्सर नाम, भीष्म साहनी (भटकती राख), पृष्ठ २१६
18. भूखा ईश्वर, धर्मवीर भारती,(चाँद और टूटे लोग) पृष्ठ ७८
19. मौत का सामान, शैलेश मखियानी (मेरी तैंतीस कहानियां), पृष्ठ ३०
20. पंच लाईट, रेणु (ठुमरी), पृष्ठ ८६
21. पाप-जीवी, शिवप्रसाद सिंह (कर्मनाशा की हार), पृष्ठ ४४
22. कामयाबी-नाकामयाबी, हर्षनाथ (कल्पना), नवम्बर १६५४
23. तूफान का अंत, श्री सागर (कल्पना), जनवरी, १६४४
24. किराये का काम, राजेन्द्र यादव (जहां लक्ष्मी कैद है), पृष्ठ ५१
25. बंद गली का आखिरी मकान, धर्मवीर भारती पृ० ६८
26. प्रेत मुक्ति, शैलेश मटियानी
27. मौत का सामान, शैलेश मटियानी (मेरी तैंतीस कहानियां), पृष्ठ ८
28. एक था विमल, कृष्ण बलदेव वैद (बीच का दरवाजा), पृष्ठ १७० और 'जली हुई रस्सी' शानी (बबूल की छांव), पृष्ठ २१